INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 8.031 (SJIF 2025)

नवजागरण और मैथिलीशरण गुप्त के निबंध काव्यों

Dr. Sharmilaben S. Patel
HOD & P.G. Incharge,
Shree Rang Navchetan Mahila Arts College, Valia,
Bharuch (Gujarat, India)

DOI No. 03.2021-11278686 **DOI Link ::** https://doi-ds.org/doilink/12.2025-51382945/IRJHIS2512009

सारांश :

हिंदी साहित्य में नवजागरण एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक, वैचारिक एवं सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया थी, जिसमें राष्ट्र चेतना, सामाजिक सुधार तथा मानवीय मूल्यों को नई दृष्टि प्रदान की। मैथिलीशरण गुप्त इस नवजागरणकाल के प्रमुख कवि माने जाते है। उनका काव्य न केवल राष्ट्रीयता की भावना को उभारता है, बल्कि सामाजिक चेतना, स्त्री समाज के उत्थान, ऐतिहासिक पुनरूत्थान एवं धार्मिक–सांस्कृतिक पुनर्मूल्यांकन को भी स्वर देता है। प्रस्तुत शोधपत्र में नवजागरण के प्रभाव, गुप्तजी के काव्य का स्वरूप और उसका युग–सापेक्ष योगदान का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तावना :

नवजागरण नवीन जागृति से संबधित एक ऐसी चेतना है, जिसका उदय 16वी. शताब्दी में युरोप में हुआ, और युरोप के संर्पक के कारण भारत में भी इस आंदोलन का प्रारंभ हुआ, जिसने नवीन मानवता को जन्म दिया। इसके साथ हमारे बहुत से प्राचीन विचार भी नवीनता ग्रहण कर रहे। भारत का नवजागरण केवल साहित्यिक आंदोलन नहीं था, बल्कि यह भारतीय समाज के बौद्धिक, धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक पुनर्जीवन का युग था। औपनिवेशिक दमन, सामाजिक कुरीतियाँ, स्त्री दशा, जातिगत विषमता तथा राष्ट्रीय अस्मिता के प्रश्नों ने इस जागरण को जन्म दिया। मैथिलीशरण गुप्त (1886–1964) इस परिवर्तित चेतना के संवाहक कवि थे। उनका काव्य भारतीय संस्कृति एवं राष्ट्रवादी विचारधारा को साहित्यिक रूप में दृढता से प्रस्तुत करता है।

भारत में इस आंदोलन का प्रारंभ राजा राम मोहनराय से माना जता है। वे संस्कृत, फारसी, अरबी के विद्वान होने के साथ साथ अंग्रेजी के भी समर्थक थे। अंग्रेजी के समर्थन का एकमात्र कारण यह था कि वे चाहते थे कि भारतीय जनता विज्ञान की विविध शाखाओं के ज्ञान के साथ साथ युरोप में विकसित समाज शास्त्र का भी ज्ञान प्राप्त कर सके। वेद और उपनिषद् के परम भक्त राजा राम

मोहनराय देशवासियों को धर्म पर भी आरूढ़ देखना चाहते थे। वस्तुतः वे भारतवासियों में उपनिषद् और विज्ञान का समन्वय करना चाहते थे। राजा राम मोहनराय के बाद दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, गोविंद रानाडे, रविन्द्रनाथ ठाकुर, योगीराज अरविंद, और महात्मा गांधी प्रत्येक ने वेद और उपनिषद् के सत्यों को अपनाया। उन्हों ने रूढ़ियों और अंधविश्वासों के विरूद्ध संघर्ष किया तथा अर्न्तजातिय विवाह तथा स्त्रीशिक्षा पर बल दिया।

हिन्दी साहित्य में भी भक्तिकाल में कबीरदास और तुलसीदास ने सामाजिक रूढ़ि और परंपरा का त्याग कर समाजसुधार के लिए अपने साहित्य द्वारा कार्य किया। इसके बाद आधुनिक काल में भारतेन्दु तथा उसके समकालीन कवियों में भी नवजागरण के भाव प्रकट होने लगे। कविता में देशभक्ति, राष्ट्रप्रेम जैसे नए विषयों का प्रवेश तथा अनुवाद की प्रवृति के कारण जनता में भी नई रूचि पैदा होने लगी। अतः गुप्तजी के पहले ही हिन्दी साहित्य में नवजागरण की शुरूआत हो चुकी थी , किंतु उस नवजागरण की जितनी अभिव्यक्ति गुप्तजी के साहित्य द्वारा हुई उतनी उसके पूर्व का कोई भी कवि नहीं दे सका था।

भारतीय संस्कृति के अनन्य प्रस्तोता गुप्तजी द्विवेदीयुग के मानवतादर्शवादी और समन्वयवादी कवि है। द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि गुप्तजी के विचारों, आदर्शो, मान्यताओं और विश्वासों पर द्विवेदी युग का पूर्ण प्रभाव है। नवीनता एवं युगीन प्रभाव के कारण उनकी कृतियों में राष्ट्रप्रेम, भारतीय संस्कृति, सर्वधर्म समन्वयवाद, सत्याग्रह, तथा क्रांति को अपने काव्य का विषय बनाया और नवीन चेतना की प्रतिष्ठा की।

गुप्तजी के प्रबंध एवं प्रबंधेत्तर काव्यों में भारतीय संस्कृति के गुणगान, नारीभावना, मानवताधर्म, आदर्शवाद,कर्मशीलता तथा आधुनिक युग के प्रति आस्था एवं विश्वास आदि विशेषताएँ दृष्टिगत होती है। खड़ीबोली में लिखा गया 'साकेत' अत्यंत लोकप्रिय ग्रंथ हैं। उसमें उन्हों ने भारत की धर्म प्राण, आदर्श–प्रिय एवं राम स्नेही जनता के मर्म को स्पर्श किया है। साकेत की रचना का उदेश्य 'उर्मिला का विरह वर्णन नही है – आर्य सभ्यता की प्रतिष्ठा हे।'

मैथिलीशरण गुप्त के प्रबंध काव्यों की तरह ही उनके प्रबंधेत्तर काव्यों में भी राष्ट्रीयता के साथ साथ भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की सुंदर अभिव्यक्ति है। उनके प्रबंधेत्तर काव्यों में प्राचीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति के गौरव का उद्‌घाटन तथा विज्ञान के नवीन आविष्कारों का उपयोग जनकल्याण के हेतु हो ऐसा चाहते है।

गुप्तजी ने सन् 1912 ई. से लेकर मृत्यु पर्यन्त राष्ट्रीय भावों की गंगा को जन जन के जीवन में बहाने का भगीरथ प्रयास किया है। 1912 में लिखी हुई 'भारत भारती' इसलिए और भी अधिक महत्वपूर्ण है कि भारत के इतिहास में महात्मा गांधी दक्षिण आफ्रिका से 1915 में लौटे थै, और 1913 में रवीन्द्रनाथ ठाकुर को उनकी 'गीतांजली' पर नॉबल पुरस्कार जैसा अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का गौरव मिला। भारत के राष्ट्रीय जागरण में 'भारत–भारती' का अपना एक स्थान है। 'भारत–भारती' में कवि ने लिखा :–

"हम कौन थे, क्या हो गए है और क्या होंगे अभी

आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएँ सभी।
यद्यपि हमें इतिहास अपना प्राप्त पुरा है नहीं
हम कौन थे इस ज्ञान को, फिर भी अधूरा है नहीं।''1

और नवयुवकों से उन्होंने कहा –

''हे नवयुवानो देश भर की दृष्टि तुम पर ही लगी,
हे मनुज जीवन की तुम्ही में ज्योति सबसे जगमगी।
दोगे न तुम तो कौन देगा योग देशोद्धार में ?
देखो, कहाँ क्या हो रहा है आजकल संसार में ?''2

गुप्तजी के मन में देश की बुरी हालत की चिंता बराबर घर करती रही। 'भारत–भारती' में उन्हों ने समाज की कई बुराईयों पर लिखा है। जो बाते उन्हों ने 1912 में लिखी, वे आज भी बिलकुल सही है गरीबी और अकाल के बारे में उन्हों ने लिखा –

''देखो जिधर अब बस उधर ही है उदासी छा रही
काली निराशा की निशा सब ओर से है आ रही।
दारिद्रय दुर्धर अब वहाँ करता निरंतर नृत्य है
आजीविका अवलंब बहुधा मृत्यु का ही कृत्य है
कुल, जाति–पाँति न चाहिए, यह सब रहे या जाय रे
बस एक मुट्ठी अन्न हमको चाहिए अब हाय रे !
इस पेट पापी के लिए ही हम विधर्मी बन रहे
निज धर्म–मानस से निकल अध–पंक में है सन रहे।''3

विदेशी वस्तुओं के प्रति लोगों का मोह कितना है –

''विदेशी वस्तु ही क्यों, अब स्वदेशी है कहां ?
यह वेशभूषा और भाषा, सब विदेशी है यहां !
गुण मात्र छोड़ विदेशियों के हम उन्हीं में सन गए,
कैसी नकल की, वाह ! हम नक्काल पूरे बन गए !
यदि हम विदेशी माल से मुंह मोड सकते है नहीं –
तो हाय ! उसका मोह भी क्या छोड सकते है नहीं ?
क्या बंधुओ के हित तनिक भी काम कर सकते नहीं !
निज देश पर क्या अल्प भी अनुराग कर सकते नहीं ?''4

''वह आधुनिक शिक्षा किस विध प्राप्त भी कुछ कर सको –
तो लाभ क्या, बस क्लर्क बनकर पेट अपना भर सको।
लिखते रहो तो सिर झुका, सुन अफसरों की गालियाँ
तो दे सकेगी रात को दो रोटियाँ घरवालियां।''5

प्राचीन भारत के महापुरुषों को अपनी श्रध्धंजलि देते हुए मैथिलीशरण गुप्तजी वेद, उपनिषद,

आर्यभट्ट, व्यास, कालिदास, भरतमुनि, विक्रमादित्य और भोज के बाद पृथ्वीराज और मध्ययुग के वीरों में अकबर, महाराणा प्रताप, शिवाजी जैसी विभूतियों को अपना सम्मान देते है।

आधुनिक काल के आदर्शों में सर सयाजीराव गायकवाड जैसे आदर्श राजा राममोहनराय, स्वामी दयानंद सरस्वती, रामकृष्ण, दिनकरराव और माधवराव जैसे नीतिज्ञ, कानून के विद्वान डाक्टर गोखले, गांधी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी जैसी विभूतियों के नाम भी गुप्तजी ने भारत–भारती में गिना दिये थे।

'भारत–भारती' में प्राचीन भारत की झलक देते हुए भारत भूमि की आदर्श नारियों के स्मरण को गुप्तजी ने इस प्रकार संबोधित किया है –

''केवल पुरुष ही थे न वे जिनका जगत् को गर्व था,
गृहदेवियां भी थी हमारी देवियां ही सर्वथा।
था अत्रि–अनुसूया–सदृश गार्हस्थ्य दुर्लभ स्वर्ग में,
दांपत्य में वह सौख्य था जो सौक्ष्य था अपवर्ग में।
निज स्वामियों के कार्य में समभाग जो लेती न वे,
अनुरागपूर्वक योग जो उसमें सदा देती न वे,
तो फिर कहाती किस तरह 'अर्द्धांगिनी' सुकुमारियां
तात्पर्य यह अनुरुप ही थी भवरों की नारियां
विदुला, सुमित्रा, कुन्ती, सावित्री, सुकन्या, अंशुमती।''6

गांधारी, दमयंती के बारे में बताकर वे फिर कहते है –

अबला जनों का आत्म–बल संसार में वह था नया,
चाहा उन्हों ने तो अधिक क्या, रवि–उदय भी रुक गया
जिस क्षुब्ध–मुनि की दृष्टि से जलकर विहग भू पर गिरा।
वह भी सती के तेज सम्मुख रह गया निष्प्रभ निरा।''7

आगे चलकर वे पुनः कहते है –

''है प्रीति और पवित्रता की मूर्ति सी वे नारियां
है गेह में वे शक्ति–रुपा, देह में सुकुमारियां
गृहिणी तथा मंत्री स्वपति की शिक्षिता है वे सती
ऐसी नहीं है वे कि जैसी आजकल की श्रीमति।''8

आधुनिक काल की स्त्रियों की दुर्दशा पर वे वर्तमान खंड़ में लिखते है –

''पाले हुए पशु पक्षियों का ध्यान तो रखते सभी
पर नारियों की दुर्दशा क्या देखते है हम कभी ?
हमने स्वयं पशु–वृति का साधन बना डाला उन्हें,
संतान जनने मात्र को बस्त्रान्न दे, पाला उन्हें।''9

नारियों के प्रति ऐसा उदार भाव उनके अन्य काव्यों में भी दर्शित होता है। वे परिवार को

केन्द्र में रखकर भारतीय समाज को देखना चाहते है। नारी माता, प्रेमिका, बहन, स्वामिनी, दासी, विरांगना, परित्यकता, विरहिणी आदि अनेक रुपो में उनके खंडकाव्यों में चित्रित है।

'भारत–भारती' के भविष्यवत् खंड में नए युग का स्वागत करते हुए गुप्तजी ने लिखा है –

''हमको समय को देखकर ही नित्य चलना चाहिए,
बदले हवा जब जिस तरह हमको बदलना चाहिए।
विपरित विश्व प्रवाह के निज नाव जा सकती नहीं,
अब पूर्व की बाते सभी प्रस्ताव पा सकती नहीं।
व्यवसाय अपने व्यर्थ है अब भव्य यंत्रो के बिना,
परतंत्र है हम सब कही अबा भव्य यंत्रो के बिना।
कल के हलों के सामने अब पूर्व का हल व्यर्थ है,
उस बाष्प विद्युद्वेग–सन्मुख देह का बल व्यर्थ है।''10

विज्ञान के प्रति प्रेम, रुढ़ियों का विरोध, अपने से भिन्न धर्म को समझने का प्रयत्न करना, उन्हें आदर देना, गुप्तजी की कविता का मुख्य विषय रहा है।

भारत हमारा देश है, वह हमारी जन्म भूमि है, उस पर हमारा स्वत्व है। हमारी जन्मभूमि पर विदेशी आकर शासन करें, अपने घर में ही हम बन्दी बनें रहे यह घोर लज्जा की बात है। इस लोह श्रृंखला को प्राणों की बलि देकर भी छिन्न–भिन्न करना होगा – भारत की आत्मा गुप्तजी के स्वर में चित्कार कर उठी –

''भारत लक्ष्मी पडी राक्षसों के बन्धन में।
सिन्धु पार वह विलख रही है व्याकुल मन में।''11

'भारत–भारती' में अतीत प्रेम और सुधारावादी दृष्टि के साथ हिन्दू–राष्ट्रवादी की काव्य–चेतना की अभिव्यक्ति हुई है। इसके साथ–साथ कविने देशवासियों को पराधिनता की बेडियों से मुक्त होने के लिए सचेत एवं सावधान किया और विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने का आग्रह किया, जैसे –

''शासन किसी पर जाति का चाहे विवेक विशिष्ट हो
संभव नहीं है किन्तु जो सर्वांश में वह इष्ट हो।''12

खडीबोली और केवल खडीबोली में कविता लिखकर निर्भीकतापूर्वक किन्तु अत्यंत नम्रता से खडे रहने वाले गुप्तजी थे। जिस समय ''भारत–भारती'' निकली उस समय राजनैतिक और सामाजिक विचारधारा में तूफान आया। सुधार आंदोलन, खिलाफत आंदोलन, सत्याग्रह आंदोलन, आतंकवादी आंदोलन, अन्य हिंसक क्रान्ति के आंदोलन, 42 की क्रान्ति, आजाद हिन्द फौज संबंधी आंदोलन, बंगाल के अकाल का जनख सभी ने देश की जनता के भिन्न–भिन्न वर्गो और स्तरों को प्रभावित किया। लक्ष–लक्ष अबालवृद्ध नर–नारी अपने प्राणों को हथेली पर रखकर स्वातंत्र्य संग्राम में जुझ गए। 'भारत–भारती' का सामाजिक महत्व अपरिमेय था। सभा मंचो पर वक्ता 'भारत–भारती' के छंदो का इतना उपयोग करते मानों उनके कहने की सामग्री तथा शीर्षक और प्राण केवल

भारत–भारती में ही है। उन दिनों शायद ही कोई समाचारपत्र हो जिसमें गुप्तजी और उनकी कविता 'भारत–भारती' की प्रशंसा न की हो।

धर्म के नाम पर समाज में चलनेवाले ढोंग, अनाचार, आपस में जातिभेद और शैव–वैष्णव आदि असंख्य भेदभावों की वे निंदा करते है। हिन्दू समाज में कुरीतियों में बेजोड विवाद, अंध–परंपरा, वर कन्या विक्रय, धनोपार्जन के लिए मिलावट, नशेबाजी, आत्मविस्मृति, गृहकलह सब पर उन्होंने प्रकाश डाला है।

हिन्दू' काव्य में कवि ने राष्ट्रव्यापी सामाजिक जड़ता, वैयक्तिक निष्चेष्टता, धार्मिक असहिष्णुता, जातिगत अनुदारता आदि की केंचुली उतार फेंकने की प्रेरणा दी है। सामाजिक कुरीतियों के अर्न्तगत छूआछूत, विधावा, बालविवाह, जाति बहिष्कार, रूढ़िवादिता, कलह, फुट आदि से मुक्त होने की ओर कवि ने ध्यान आकृष्ट कराया है।

स्वावलम्बी बनकर कर्म और पुरुषार्थ का मार्ग अपनाने का उद्‌बोधन करते हुए कवि ने लिखा है–

''कत जावे घर में ही सूत
लगे न लंकासुर की छूत।
घर की चादर हो तैयार
न हो किसी पर लज्जा भार।''13

प्रजातंत्र में गुप्तजी की आस्था के अनेक प्रमाण उनकी रचनाओं में मिलते है। प्रजातंत्र की एक बडी समस्या होती है अल्पसंख्यको को संतुष्ट रखना, उन्हें यथोचित प्रतिनिधित्व देना। हिन्दू जाति के अल्पसंख्यक शुद्र या अछूत दलित और हरिजनों के प्रति गुप्तजी ने लिखा था–

''रहो न हे हिन्दू संकीर्ण
न हो स्वयं ही जर्जर जीर्ण।''14

गुप्तजी धार्मिक स्वतंत्रता और सहिष्णुता के पक्षपाती है। वे प्रांतीय भाषाओं के विकास के समर्थक होते हुए भी राष्ट्र में राष्ट्रभाषा के पोषक थे। वे जानते थे कि भारत में अनेक छोटे–छोटे राज्य समूह है और सबके उपर आनेवाला एक ही संकट के समय आपसी भेदभाव भुलकर एक हो जाते है। गुप्तजी ने लिखा है–

''युद्ध मध्य पांचाल, पुलिन्द
चेदि कच्छ, कश्मीर कुलिन्द,
द्रविड मद्र मालव कर्नाट
महाराष्ट्र, सौराष्ट्र विराट
कामरूप किवां, आसाम
सातों पुरियां चारों धाम,
अटक कटक तक एक उमंग
दुःख में सुख में सब है संग। ''15

यह स्वतंत्रता, समता, बंधुभाव का फ्रेंच राज्य क्रान्ति का आदर्श वे स्वराज्योतर नेहरूयुग के

प्रजातंत्र, धर्मनिरप्रेक्षता, समाजवाद के आदर्शों में परिणत करना चाहते है। उनका विश्वास है कि भारत पुनः दुनिया के देशों का अगुआ और उन्हें प्रकाश देनेवाला महान राष्ट्र बनेगा। अंततः विश्व के देश आपसी मनमुटाव, वर्ण द्वेष, धर्मांधता, अनावश्यक हिंसा, अणु–शास्त्रों की दौड से तंग आकर एक ऐसे बिंदु पर आ पहुचेगी जहाँ सत्य और अहिंसा के, साधन शुचिता के और श्रम की प्रतिष्ठा के गांधीजी द्वारा दुहराये गए नैतिक मूल्य ही सबको मान्य होगा।

'हिन्दू' काव्य में उन्हों ने सिर्फ हिन्दुओं को ही चेतावनी नहीं दी, पर अंग्रेजों के प्रति, मुसलमानों के प्रति, पारसियों के प्रति, ईसाइयों के प्रति भी लिखा है। हिन्दू के अंतिम गोत का पहला छंद है–

''हम सब है हिन्दू सन्तान
जिये हमारा हिन्दुस्तान
जैन, बौद्ध, सिख, आर्य शेष
सब हिन्दू कूल के ही वेश
फिर क्या विग्रह क्या विद्वेष?
छोडो मधुर मिलन की तान,
जिये हमारा हिन्दुस्तान।''16

समाज और राष्ट्र के विचार के बाद वे सभी धर्मो को समान आदर से देखते है।

वर्तमान समय में शिक्षा का प्रचार प्रसार बढ़ा है, मगर अच्छी शिक्षा प्राप्त करने के बाद नवयुवकों अधिकतर शहरों की तरफ दौडते है। गांधीजी भी यही कहते थे कि शहरों के विकास का आधार गाँव है, परंतु आज गाँव टूट रहे है, गुप्तजी शिक्षा प्राप्त किए नवयुवकों से कहते है–

''करके शिक्षा कार्य समाप्त ,
विद्यालय की पदवी प्राप्त,
फिर तुम ग्रामों में कर वास
ग्रामिणों का करो विकास।''17

इस प्रकार पदवी प्राप्त नवयुवकों से गुप्तजी ग्रामिणों के विकास की अपेक्षा रखते है।

'राजा – प्रजा' नामक कृति में राजा और प्रजा दोनों के परस्पर संबंध को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है और बताया है कि राजा स्वयं स्वतंत्र न होकर प्रजा का उस पर अधिकार रहता है।

लोक प्रतिनिधि के रुप में चित्रित राजा अपनी समस्त प्रजा और प्रजातंत्र के समर्थको के दोषों का उल्लेख कर उसको निरंतर सावधान रहने की चेतावनी देता है। अपने दुष्कर्मो की अभिव्यक्ति स्वयं करके वह अपनी उदारता का परिचय देता है।

शिष्टता एवं सभ्यता से कार्य करना राजा का परम कर्तव्य माना जाता है। वह राजा का सही कर्तव्य बताते हुए प्रजा को संदेश देना चाहते है कि राजा यदि कर्तव्यनिष्ठ एवं प्रजा के लिए सतर्क हो तो उसका नेतृत्व अवश्य स्वीकार करना चाहिए और यदि उसमें पात्रता नहीं है तो उसे शीघ्र ही पदभ्रष्ट कर देना प्रजा का कर्तव्य है। प्रजा की जागृति हेतु वह कहता है –

''होगा क्या अब भी एक न जन रति भाजन,
फिर कहो भले ही उसे न अब तुम राजन।
तुम मुझे सुधार न सके अवश्य निकालो।
पर सभी न शासक बनो, सुशासन पालो।''18

कहने का आशय यह है कि प्रजा में इतनी शक्ति होती है कि वह उचित या पात्र सदस्य को ही अपना नेतृत्व प्रदान कर सकती है। समस्त प्रजा का शासक बनने का कदापि प्रयत्न न करना चाहिए और यथोचित शासक की आज्ञा पालन भी आवश्यक है।

गुप्तजी की धार्मिकता अत्यंत श्रेष्ठ एवं उच्च स्तर की है। वे जाति धर्म और संप्रदाय की संकीर्णता से परे है। विश्वबंधुत्व ही उनका लक्ष है। यथा –

''किन्तु हमारा लक्ष्य, एक अम्बर भू सागर,
एक नगर सा बने विश्व, हम उसके नागर।''19

गुप्तजी ने प्रजा के कर्तव्यों का उल्लेख किया और बताया कि यदि प्रजा चाहे तो अपने पुरुषार्थ से इसी पृथ्वी पर स्वर्ग की स्थापना कर सकते है। कवि के शब्दों में –

''बढो़ बंधुओ हीन भाव से ऊपर उठकर,
रहो न तुम संकीर्ण वायुमंडल में धुटकर।
निर्मित तुमने यहाँ किए थे कभी तपोवन,
इस अवनि पर तुम उतार सकते हो नन्दन।
समय समय पर किए तुम्हीं ने युग परिवर्तन,
स्वयं नियति ने किया तुम्हारी गति पर नर्तन।
करो वही पुरुषार्थ, तुच्छ यह तन्द्रा त्यागो,
सर्वोदय के सुप्रभात में जागो।''20

गुप्तजी युगधर्म पर पुरा बल देते है। युग धर्म का आधार है वर्तमान जीवन। वर्तमान का यह देश काल जिसमें हमें जीना है। विगत का अपना महत्व है, उससे हमें प्रेरणा ग्रहण करनी चाहिए – किन्तु हमारा कर्म क्षेत्र तो वर्तमान ही है। हमारे लिए प्राथमिक महत्व उसीका है –

''जिस युग में हम हुए वही तो
अपने लिए बड़ा है।
अहा ! हमारे आगे कितना
कर्मक्षेत्र पडा है।''21

वर्तमान की भूमिका पर ही हमें अपने उज्जवल भविष्य का निर्माण करना। लेकिन युग धर्म की सही पहचान होनी चाहिए। युग की प्रत्येक प्रवृति को युगधर्म मानना गलत होगा – इसीलिए कवि युग के धर्म और अधर्म में भेद करना लोक–कल्याण के लिए आवश्यक मानता है –

''सावधान युग के अधर्म को
हम युग धर्म न समझे।''22

वास्तव में युग बोध की सार्थकता इसी में है।

निष्कर्ष :

नवजागरण कालिन चेतना और मैथिलीशरण गुप्त के काव्य का संबंध अत्यंत घनिष्ठ है। गुप्तजी ने राष्ट्र और समाज को जगाने का जो कार्य अपने काव्य द्वारा किया वह भारतीय साहित्य के इतिहास में अद्वितीय है। वे न केवल नवजागरण के प्रवक्ता थे, बल्कि उसके आध्यात्मिक और सांस्कृतिक दूत भी थे।

संदर्भ सूचि :

1. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 14, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
2. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 183, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
3. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 97, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
4. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 113, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
5. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 127, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
6. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 21, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
7. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 24, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
8. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 69, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
9. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 148, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
10. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 170, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
11. गुप्त मैथिलीशरण, साकेत पृष्ठ 302, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
12. गुप्त मैथिलीशरण, भारत भारती, पृष्ठ 91, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
13. गुप्त मैथिलीशरण, हिन्दू पृष्ठ 115, साहित्य सदन, झाँसी।
14. गुप्त मैथिलीशरण, हिन्दू पृष्ठ 100, साहित्य सदन, झाँसी।
15. गुप्त मैथिलीशरण, हिन्दू पृष्ठ 41, साहित्य सदन, झाँसी।
16. गुप्त मैथिलीशरण, हिन्दू पृष्ठ 212, साहित्य सदन, झाँसी।
17. गुप्त मैथिलीशरण, हिन्दू पृष्ठ 79, साहित्य सदन, झाँसी।
18. गुप्त मैथिलीशरण, राजाप्रजा पृष्ठ 17, साहित्य सदन, झाँसी।
19. गुप्त मैथिलीशरण, राजाप्रजा पृष्ठ 31, साहित्य सदन, झाँसी।
20. गुप्त मैथिलीशरण, राजाप्रजा पृष्ठ 32, साहित्य सदन, झाँसी।
21. गुप्त मैथिलीशरण, द्वापर पृष्ठ 29, साहित्य सदन, झाँसी।
22. गुप्त मैथिलीशरण, द्वापर पृष्ठ 29, साहित्य सदन, झाँसी।